ISSN: 2395-7852

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

Volume 11, Issue 2, March 2024

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

IMPACT FACTOR: 7.583

| www.ijarasem.com | ijarasem@gmail.com | +91-9940572462 |

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 7.583 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 11, Issue 2, March-April 2024 |

हिंदी पद्य साहित्य में स्त्री विमर्श

राजेन्द्र कुमार
सहायक आचार्य, हिंदी साहित्य
राजकीय महाविद्यालय, मकराना

सारांश

हिन्दी पद्य साहित्य में स्त्री विमर्श एक महत्वपूर्ण और समकालीन विषय है जो साहित्यिक जगत में महिलाओं की स्थिति, उनके अनुभवों और उनकी आवाज को सामने लाने का प्रयास करता है। स्त्री विमर्श का उद्देश्य सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक मुद्दों पर महिलाओं के दृष्टिकोण को साहित्य के माध्यम से प्रकट करना है। *हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श की जहां तक बात है तो बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से हमारे देश में जो स्त्रीवादी आंदोलन हुए उन आंदोलनों से भारतीय साहित्य काफी प्रभावित हुआ है। इसकी पृष्ठभूमि के रूप में यूरोप और अमेरिका की जिस स्त्रीवादी विचारधारा के प्रभाव के कारण ऐसा हुआ है वह स्वीकार करने के बावजूद कहा जा सकता है कि स्त्री विमर्श कभी तो संसार की समस्त नारियों द्वारा समस्त पुरुषों का विरोध करने वाली विचारधारा के रूप में उभरकर सामने आया तो कभी यह अन्यत्र किसी रूप में सामने आया।* स्त्री विमर्श में स्त्रियों की अस्मिता और उनकी पहचान का सवाल उठाया जाता है। यह विमर्श महिलाओं को अपनी पहचान और अस्तित्व की पुष्टि करने का अवसर देता है। समाज में स्त्रियों के प्रति हो रही असमानताओं, भेदभाव और अन्याय को उभारना और उनका विरोध करना स्त्री विमर्श का मुख्य उद्देश्य है। इसके अतिरिक्त स्त्रियों की स्वतंत्रता और स्वावलंबन को प्रोत्साहित करना और उन्हें सामाजिक बंधनों से मुक्त करने की दिशा में साहित्यिक प्रयास करना भी इस विमर्श का प्रमुख एवं मुख्य उद्देश्य रहता है। स्त्रियों के जीवन के अनुभव, उनकी संवेदनाएँ, संघर्ष और संवेदनशीलताओं को कविता के माध्यम से अभिव्यक्त करना। प्रस्तुत आलेख में हिन्दी पद्य साहित्य में स्त्री के चित्रण का विश्लेषण करते हुये विभिन्न कालों में साहित्यकारों की रचनाओं में स्त्री के बदलते विमर्श का तुलनात्मक विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

मूल शब्द – स्त्री विमर्श, मनोवैज्ञानिक चित्रण, भक्ति काल, रीतिकाल, आधुनिक काल

प्रस्तावना :

हिन्दी पद्य साहित्य में स्त्री विमर्श का मूल्यांकन करने का अर्थ है, इस विमर्श के साहित्यिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संदर्भों में इसके महत्व और प्रभाव का विश्लेषण करना। स्त्री विमर्श हिन्दी साहित्य में न केवल महिलाओं के अनुभवों और मुद्दों को उजागर करता है, बल्कि यह समाज में उनकी स्थिति और भूमिका पर भी गहन दृष्टि प्रदान करता है। आधुनिक हिंदी–साहित्य में स्त्री, चेतना और सर्जना के बीचों–बीच खड़ी दिखाई देती है। पश्चिम के प्रभाव के कारण इस काल में नई चेतना का विकास हुआ। हिंदी साहित्यकारों ने स्त्री–पात्रों के प्रति पूरी संवेदना के साथ उनकी महानता का चित्रण किया है। औरतों को लेकर पिछले 50 वर्षों में काफी काम हुआ है। मगर समाज–शास्त्र की दृष्टि से स्त्री–विमर्श हिंदी–साहित्य में बहुत बाद में बहस का मुद्दा बना। डॉ ओमप्रकाश लिखते हैं कि 1974 में प्रगतिशील महिला संगठन का गठन हुआ इसके बाद महिला मुद्दों को अखबारों पत्रिकाओं आदि में प्रमुख स्थान मिलने लगा। वैदिक काल स्त्री का उत्कर्ष काल रहा है, किन्तु धीरे–धीरे समय चक्र के परिवर्तन के कारण स्त्री के पराभव और शोषण का युग प्रारम्भ हो गया।

हिंदी साहित्य का आदि काव्य धार्मिक उपदेशों एवं वीर–गाथाओं के रूप में लिखा गया है। पहला वीरकाव्य के रूप में दूसरा मधुर भक्ति के रूप में। तत्कालीन परिस्थितियों एवं वातावरण के अनुसार वीरगाथा काल में स्त्री के कामिनी एवं वीरांगना रूप दृष्टिगत होते हैं। उस समय स्त्री संघर्ष के बीज के रूप में थी क्योंकि स्त्रियों के कारण राजा–महाराजाओं के भी युद्ध हो जाते थे। वीर–पत्नी अपने जीवन की सार्थकता अपने स्वामी के वीरोचित कर्मों में ही समझती थी। यदि उसका पति वीरगति को भी प्राप्त हो जाए तो वह उसके साथ ही मरने को तैयार हो जाती थी। जैन आचार्यों, सिद्धों, नाथों ने भी स्त्री के प्रति विकृति के स्वर को मुखरित किया है। साहित्य के विभिन्न कालखंडो में समकालीन साहित्यकारों के द्वारा स्त्री को विभिन्न रूपों में प्रदर्शित किया गया है जिसका कालानुसार विश्लेषण निम्नप्रकार है–

भक्ति काल (1500–1700) :

हिंदी साहित्य का भक्ति काल राजनीतिक दृष्टि से विक्षोभ का काल था, जिसके फलस्वरूप कवि का मानस भगवान का आश्रय खोजने लगा। इस काल के काव्य में स्त्री चित्रण मुख्यतः दो रूपों में हुआ। एक ओर वह उदात्त आदर्श आराध्य के रूप में दूसरी ओर एक सामान्य स्त्री के रूप में। भक्ति काल के निर्गुण संत कवियों ने स्त्री को मुक्ति मार्ग की बाधा बताया है। कबीर का अभिमत है कि "स्त्री की छाया परत अँधा होत भुजंग" अर्थात स्त्री की छाया पड़ते ही सांप भी अँधा हो जाता है। सुंदरदास के अनुसार, स्त्री विष का अंकुर, विष की बेल है। इन सबसे यही विदित होता है कि इन्होंने स्त्री के केवल कामिनी रूप को ही देखा है। उसके मातृत्व रूप एवं पतिपरायण रूप को नहीं। दूसरी और संत कवियों ने स्त्री के मातृत्व एवं पतिपरायण रूप को आदर की दृष्टि से देखा है। साथ ही तुलसीदास जैसे कवियों ने स्त्री को ताड़न का अधिकारी मानते हुए उसे पशुतुल्य स्वीकारा है, शायद ही ऐसा कोई कवि होगा जिसने स्त्रियों के प्रति इतने सम्मानजनक शब्दों का प्रयोग किया

हो। सूफियों के अनुसार स्त्री प्रेम एवं उपासना की वस्तु है। उसे योग, त्याग, तपस्या तथा उत्सर्ग द्वारा ही पाया जाता है। उसका प्रेम लौकिक–अलौकिक दोनों ही है। सूरदास जी ने अपने काव्य में विभिन्न रूपों, उनकी मान्यताओं और मूल्यों का सहज एवं यथार्थ चित्रण किया है। सूर ने स्त्री ह्रदय का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। सूरसागर के प्रथम खंड में कृष्ण कथा वर्णन के पूर्व कवि स्त्री को नागिन से अधिक भयंकर मानता है और लिखता है कि ‘‘नागिन का विष तो तभी व्याप्त होता है, जब वह काट लेती है, पर स्त्री अपनी दृष्टि विशेष मात्र से मानव मन को चेतनाहीन कर लेती है’’।

ऐसे समय में जहां स्त्री को नरक का द्वार, सर्पिणी, अध्यात्म में बाधक, पशुतुल्य जैसे उपमानों से अलंकृत किया जाता था। उस समय कृष्णभक्त मीराबाई का पितृसत्तात्मक समाज के विरुद्ध जाकर अपनी निजता के अनुरूप जीवन यापन करना बहुत आश्चर्य की बात थी। मीरा की भावना, स्त्रीत्व की भावना थी, जो पूर्णत्व चाहती थी। ऐसे काव्य में प्रेम–विरह है, विलास से अर्पित स्त्री का चित्र रुचिकर तो लगता है किन्तु उससे स्त्री के स्वतंत्र व सक्षम अस्तित्व का बोध कदापि नहीं हो पाता और न उससे उसका समग्र व्यक्तित्व ही उभर पाता है। भक्ति काल में कवियों की स्त्री विषयक दृष्टिकोण में उसे नागिन व नरक का द्वार कहा है तो दूसरी और अपनी–अपनी आत्मा को स्त्री रूप में अंकित किया है। एक और स्त्री को मुक्ति मार्ग की बाधा मानकर उसकी उपेक्षा की है और साथ ही यह भी स्पष्ट हो जाता है कि सामान्य स्त्री के प्रति इनका दृष्टिकोण उदार नहीं है।

रीतिकाल (1700–1900) :

रीतियुगीन कवियों ने रूप–यौवन के आकर्षण की आंधी में स्त्री के रूप का ही वर्णन किया है। कहीं–कहीं तो यह स्वाभाविकता की सीमा का ही अतिक्रमण करती हुई सी प्रतीत हो जाती है। स्त्री ही रीतिकाल में कवि की समस्त भावनाओं का केंद्र है, परन्तु इन रीतिकवियों केशव, बिहारी, घनानंद, देव, मतिराम, सेनापति आदि को स्त्री का केवल कामिनी रूप ही प्रिय था। रीतिकाल के कवियों की दृष्टि केवल स्त्री के नख–शिख उसकी मांसल देह पर ही ठहरी थी। इन कवियों की दृष्टि में यशोदा के मातृत्व की गरिमा का कहीं भी स्थान नहीं था। अतः स्पष्ट है कि इन कवियों की दृष्टि हर समय वासना एवं विलास में ही रही । कविगण अपने आश्रयदाताओं की मन–स्तुष्टि साधना प्रमुख रूप से करते थे। रीतिकाल में तो नीतिकाव्य में भी तिय छवि को भवसागर के बीच की बाधा ही माना गया है। संत कवियों की ही भांति ही नीतिकाव्य के कवियों में भी स्त्री के सम्पर्क को त्याज्य बताया गया है। इन कवियों के लिए स्त्री पुरुष के समान स्वतंत्र न होकर एक मनोरंजन की सामग्री थी। रीतिकाल के कवियों ने तो स्त्री को सिर्फ एक प्रेमिका के रूप में ही वर्णित किया है। पत्नीत्व की गरिमा के दर्शन तो कहीं भी नहीं मिलते। इसी कारण रीतिकाल के कवियों की कविताएँ श्रृंगार रस पर ही आधारित थी। सेनापति, बिहारी, मतिराम आदि की दृष्टि तो स्त्री के नयन और उसके दैहिक सौंदर्य पर ही टिकी रही। रीतिकाल में तो नीतिकाव्य में भी स्त्री को कहीं भी आदर नहीं मिला।

आधुनिक काल (1900 से अब तक) :

आधुनिक काल में देश की स्थिति करवट बदलने लगी। अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार के कारण भारतीय समाज की विचारधारा में कुछ परिवर्तन आया और पाश्चात्य साहित्य में वर्णित मानव–प्रेम ने भी इन कवियों को प्रभावित किया। श्रीमती एनी बेसेंट, जी. के. देवधर, ईश्वर चन्दर विद्या सागर, चन्दर सेन, महात्मा गांधी आदि समाज सुधारकों ने भारतीय स्त्री की पतनोन्मुख अवस्था को सुधारने का प्रबल समर्थन दिया। भारतेंदु जी ने स्त्री–शिक्षा के प्रचार हेतु 'बालवबोधिनि' नामक पत्रिका का प्रकाशन किया तथा नर–स्त्री समानता एवं स्त्री मुक्ति का नारा दिया। इस युग में कवियों ने इस बात पर बल दिया है कि स्त्री ही मानव एवं समाज का सुधार कर सकती है। इस विषय में रायदेवी प्रसाद पूर्ण की निम्न पंक्तियाँ हैं–

"स्त्री के सुधारे होत जग में प्रसिद्ध ,स्त्री के संवारे होत सिद्ध धन बल है।"

कहने का तात्पर्य यह है कि आधुनिक काल में स्त्री को थोड़े सम्मान की दृष्टि से देखा जाने लगा। उसे जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसीश अर्थात माता और जन्म भूमि स्वर्ग से भी बढ़कर है, कहा जाने लगा। इस युग के कवियों में मानवतावादी प्रवृत्ति स्त्री–पुरुष में समानता की भावना, पीड़ितों के प्रति सहानुभूति एवं मानवीय आदर्शों के रूप में थी। इन कवियों ने राधा–कृष्ण के प्रेम को आदर्श–प्रेम बताकर उनकी वंदना करते हुए की है, साथ ही रीतियुगीन नायक–नायिका के श्रृंगार, काम विलास आदि की निंदा भी की है। दिवेदी युग में कवियों ने माना समाज की उन्नति स्त्री को सम्मान दिए बिना हो नहीं सकती। इस युग में प्रथम बार स्त्रीत्व की उच्च भावना का विकास हुए देखते हैं । दिवेदी जी ने स्त्री के पक्ष का समर्थन करते हुए कहते हैं–

पति को देव तुल्य हम माने, बच्चों की भी दासी हैं,
सेवा सदा करे, नहीं सोचें भूखी हो या प्यासी,
हे भगवान, हाय तिस पर भी उपमा कैसे पाती हैं
ढोल–तुल्य ताड़न अधिकारी, हम बनाई जाती है।

छायावादी काव्य मूलतः श्रृंगारी काव्य ही है, फिर भी इन कवियों ने स्त्री को मान, पत्नी, प्रेमिका के रूपों में किया है। प्रसाद की कामायनी में श्रद्धा का पत्नी और माँ का रूप, निराला का विधवा में वैधव्य पीड़ित पत्नी, सरोज स्मृति में पुत्री रूप या कुछ अन्य कविताओं में दिव्य शक्तिमयी कल्याणी रूप आदि छायावादी कवियों ने जो कवितांए लिखीं। उनमें प्रेम की भावना पावनता, एकनिष्ठा, गहनता है। अमृता शेरगिल जैसी चित्रकार ने जर्मनी से लौटने पर भारतीय स्त्री को जब चित्रों से उकेरा तो कविता के क्षेत्र से स्त्री कैसे पीछे रह सकती थी? प्रताप कुठरी बाई, सरस्वती देवी, निधि रानी, ज्वाला देवी, सुभद्रा कुमारी चौहान, महादेवी वर्मा आदि कवयित्रियों ने साहित्य के क्षेत्र को उभारा है। इन्होंने प्रणय–भावना, वातसल्य भावना तथा स्त्री त्याग और राष्ट्र –प्रेम के गीत गाये हैं। अतः आधुनिक काल के कवियों ने अपनी कृतियों में स्त्री के महत्त्व की प्रतिष्ठा की आज की स्त्री में

स्वाभिमान तथा आत्म समर्पण की भावना ही प्रमुख है। उसे आज अपने अधिकारों की चिंता है क्योंकि वह शिक्षित है। स्त्री सृष्टि के अनादिकाल से ही मानव हृदय की रागात्मक वृत्तियों का प्रेरणा स्त्रोत रही है[8]

निष्कर्ष :

हिन्दी पद्य साहित्य में स्त्री विमर्श का मूल्यांकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि इसने साहित्य को समृद्ध और समाज को संवेदनशील बनाया है। इसके माध्यम से महिलाओं के अनुभवों, संघर्षों और अस्मिता को प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त किया गया है। साहित्यिक दृष्टिकोण से यह विमर्श हिन्दी साहित्य में एक महत्वपूर्ण धारा के रूप में स्थापित हुआ है, जो भविष्य में भी साहित्य और समाज दोनों को दिशा देने में सहायक सिद्ध होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. समकालीन महिला लेखन –डा. ओमप्रकाश शर्माय पृ. 29, पूजा प्रकाशन, नई दिल्ली–संस्करणय 1988
2. हिंदी साहित्य का इतिहास –डा. रामचन्द्र शुक्ल ,पृ 72 राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली– संस्करणय 1886
3. समकालीन हिंदी के पत्र साहित्य में स्त्री विषयक चिंतन– मध्य युगीन साहित्य में स्त्री भावना (लेख), उषा पाण्डेय, पृ 67 भावना प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करणय 1883
4. हिंदी महाकाव्यों में स्त्री चित्रण –डा. श्याम सुन्दर व्यास, पृ. 178 सुन्दरदास–सुन्दर ग्रंथावली, पृ. 464 , राधा पब्लिकेशन–नई दिल्ली,संस्करणय 1977
5. समकालीन हिंदी पत्रकरिता में हिंदी संदर्भ –डा रमेश कुमार त्रिपाठी, नमन प्रकाशन– नई दिल्ली–11002, प्रथम संस्करणय 2007
6. सेवा समर्पण, स्त्री विशेषांक, प्रताप लहरी–प्रतापनारायण मिश्र, पृ. १६०, सेवा कुञ्ज–नई दिल्ली, संस्करण, अप्रैल 2004
7. रसज्ञ रंजन–महावीर प्रसाद दिवेदी, पृ. 60, साहित्य रत्न भंडार, आगरा, संस्करणय 1920
8. हिंदी महाकाव्यों में स्त्री चित्रण –डा. श्याम सुन्दर व्यास, स्वर्ण धूलि–सुमित्रा नंदन पंत, पृ.33, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, संस्करणय 1911

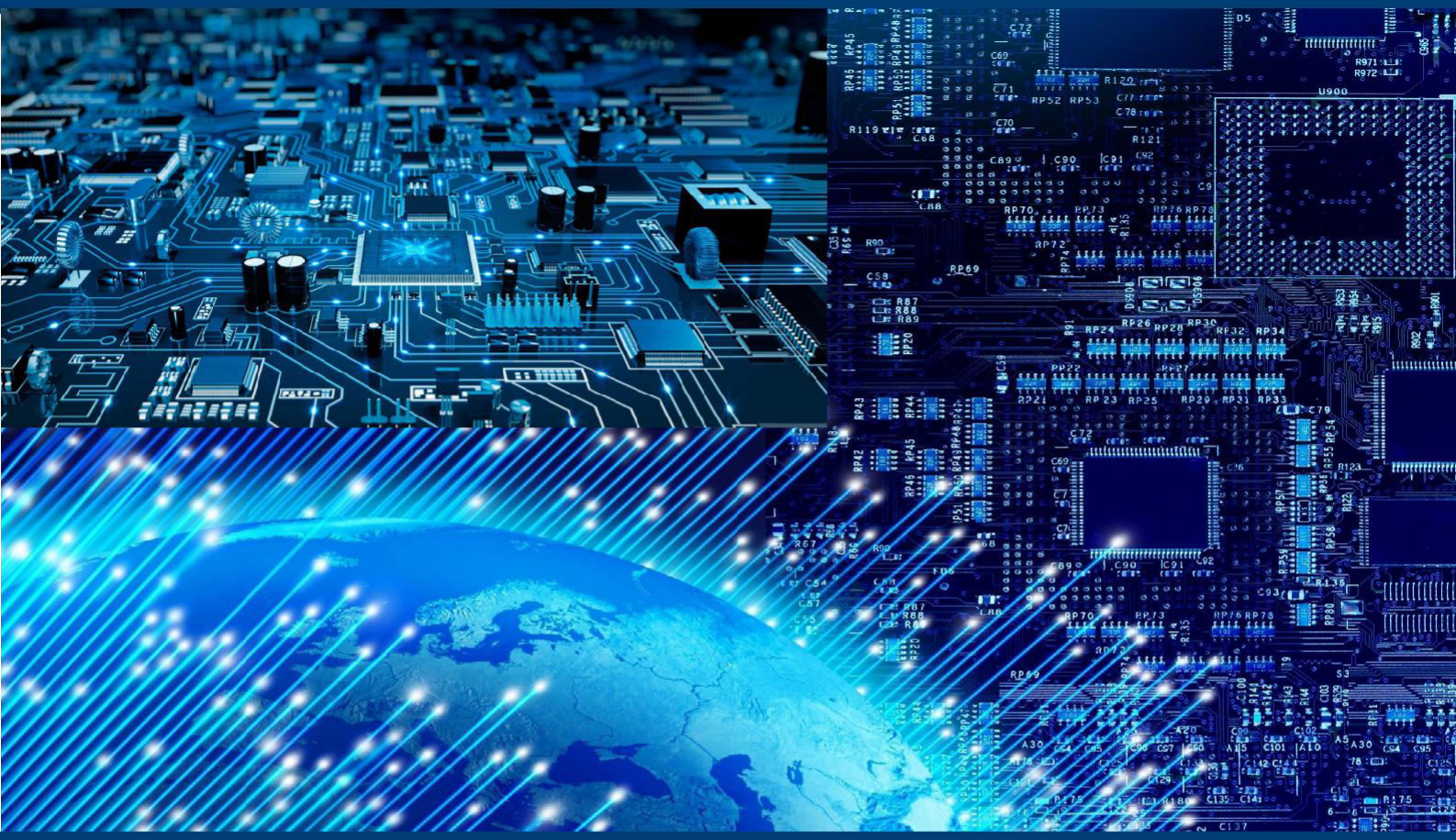

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| Mobile No: +91-9940572462 | Whatsapp: +91-9940572462 | ijarasem@gmail.com |